

‘सुगमं।

<सूत्रमें कर्मस्थिति ऐसा कहनेपर सत्तर सागरोपम कोडाकोडिप्रमाण कालका ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि कर्मविशेषकी स्थितिको छोडकर कर्मसामान्यकी स्थितिका यहां ग्रहण किया गया है। कितने आचार्य सत्तर सागरोपम कोडाकोडिको आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणा करनेपर बादर पृथिवीकायिक जीवोंकी कायस्थितिका प्रमाण होता है ऐसा कहते हैं। किन्तु उनकी यह कर्मस्थिति संज्ञा कार्यमें कारणके उपचारसे सिध्द होती है।>

‘शंका-><ऐसा व्याख्यान है, यह कैसे जाना जाता है।>

‘समाधान-><कर्मस्थितिको आवलीके असंख्यातवें भागसे गुणित करनेपर बादर-स्थिति होती है ऐसे परिकर्मके वचनकी अन्यथा उपपत्ति बन नहीं सकती, इससे पूर्वोक्त व्याख्यान जाना जाता है।>

<वहांपर यद्यपि ‘सामान्यसे बादरस्थिति होती है’ ऐसा कहा है, तो भी पृथिवी-कायादिक बादर जीवोंमें प्रत्येककी काय स्थिति ग्रहण करनी चाहियें, क्योंकि, सूत्रमें बादर-स्थितिका प्ररूपण असंख्यातासंख्यात अवसर्पिणी-उत्सर्पिणीप्रमाण किया गया है।>

‘जीव बादर पृथिवीकायिक, बादर अप्कायिक, बादर तेजकायिक, बादर वायु-कायिक, व बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्त कितने काल तक रहते हैं ? ॥ ७८ ॥

<यह सूत्र सुगम है।>

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ७९ ॥

‘एदं पि सुगमं।

‘उक्कस्सेण संखेज्जाणि वाससहस्साणि ॥ ८० ॥

‘अणप्पिदकायादो आगंतूण बादरपुढवि-बादरआउ-बादरतेउ-बादरवाउ-बादर-
वणप्फदिपत्तेयसरीरपज्जत्तएसु जहाकमेण बावीसवस्ससहस्स-सत्तवस्ससहस्स-तिण्णिण-दिवस-
तिण्णिवस्ससहस्स-दसवस्ससहस्साउएसु उप्पज्जिय संखेज्जवस्ससहस्साणि तत्थ-च्छिय
णिग्गदस्स तदुवलंभादो ।

बादरपुढवि-बादरआउ-बादरतेउ-बादरवाउ-बादरवणफ्फदिपत्तेय-सरीरअपज्जत्ता केवचिरं
कालादो होंति? ॥ ८१ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ८२ ॥

जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव बादर पृथिवीकायिक आदि पर्याप्त रहते हैं ॥ ७९ ॥

<यह सूत्र भी सुगम है ।>

उत्कृष्टसे संख्यात हजार वर्षों तक जीव बादर पृथिवीकायिकादि पर्याप्त रहते हैं ॥ ८०

॥

<अविवक्षित कायसे आकर बादर पृथिवीकायिक, बादर अप्कायिक बादर तेज-कायिक, बादर वायुकायिक और बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर पर्याप्तकोंमें यथा-क्रमसे बाईस हजार वर्ष, सात हजार वर्ष, तीन दिवस, तीन हजार वर्ष व दश हजार वर्षकी आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न होकर व संख्यात हजार वर्षों तक उसी पर्यायमें रहकर निकलनेवाले जीवके सूत्रोक्त प्रमाण काल पाया जाता है । >

जीव बादर पृथिवीकायिक, बादर अप्कायिक, बादर तेजकायिक, बादर वायु-कायिक, बादर वनस्पतिकायिक प्रत्येकशरीर अपर्याप्त कितने काल तक रहते हैं ॥ ८१ ॥

< यह सूत्र सुगम है । >

जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहण काल तक जीव बादर पृथिवीकायिक आदि अपर्याप्त रहते हैं ॥

८२ ॥

एगजीवेण कालाणुगमे पुढविकायादिकालपरूवणं

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ ८३ ॥

एदाणि वि सुगमाणि ।

सुहुमपुढविकाइया सुहुमआउकाइया सुहुमतेउकाइया सुहुम-वाउकाइया

सुहुमवणफ्फदिकाइया सुहुमणिगोदजीवा पज्जत्ता अपज्जत्ता सुहुमेइंदियपज्जत्त-अपज्जत्ताणं भंगो

॥ ८४ ॥

‘जहा सुहुमेइंदियाणं जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा तथा एदेसिं सुहुमपुढविआदीणं छण्हं जहण्णुक्कस्सकाला (१ अ.ब.स. प्रतिषु छण्हं इति पाठो नास्ति।) होंति। जहा सुहुमेइंदियपज्जत्ताणं जहण्णकालो उक्कस्सकालो वि अंतोमुहुत्तं होदि तथा सुहुमपुढविकायादीणं (२ ब.प्रतौ सुहुमपुढवियादीणं इति पाठः।) छण्हं पज्ज-त्ताणं जहण्णुक्कस्सकाला होंति। जहा सुहुमेइंदियअपज्जत्ताणं जहण्णकालो खुद्दाभव-ग्गहणमुक्कस्सो अंतोमुहुत्तं तथा एदेसिं छण्हमपज्जत्ताणं जहण्णुक्कस्साला होंति ति भणिदं होदि। सुहुमणिगोदग्गहणमणत्थयं, सुहुमवणप्फदिकाइयग्गहणेणेव सिध्दीदो।

‘अधिकसे अधिक अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव बादर पृथिवीकायिक आदि अपर्याप्त रहते हैं
॥ ८३ ॥

<ये सूत्र भी सुगम हैं।>

‘सूक्ष्म पृथिवीकायिक, सूक्ष्म अप्कायिक, सूक्ष्म तेजकायिक, सूक्ष्म वायुकायिक, सूक्ष्म वनस्पतिकायिक और सूक्ष्म निगोदजीव तथा इन्हींके पर्याप्त व अपर्याप्त जीवोंके कालका निरूपण क्रमसे सूक्ष्म एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त व सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्तोंके समान है ॥ ८४ ॥

<जिस प्रकार सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंका जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहण और उत्कर्षसे असंख्यात लोकप्रमाण काल है उसी प्रकार इन सूक्ष्म पृथिवीकायिकादिक छहोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल होता है। जिस प्रकार सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका जघन्य काल और उत्कृष्ट काल भी अन्तर्मुहूर्त होता है उसी प्रकार सूक्ष्म पृथिवीकायिकादिक छह पर्याप्तोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल होता है। जिस प्रकार सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीवोंका जघन्य काल क्षुद्रभवग्रहण और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त होता है उसी प्रकार इन छह अपर्याप्तोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल होता है। यह इस सूत्रद्वारा कहा गया है।>

‘शंका-><सूत्रमें सूक्ष्म निगोदजीवोंका ग्रहण करना अनर्थक है, क्योंकि, सूक्ष्म वनस्पतिकायिक जीवोंके ग्रहणसे ही उनका ग्रहण सिध्द है। तथा सूक्ष्म वनस्पतिकायिक >

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘ण च सुहुमवणप्फदिकाइयवदिरित्ता सुहुमणिगोदा अत्थि, तहाणुवलंभादो ? णेदं जुज्जदे, जत्थ सुत्तं णत्थि तत्थ आइरियवयणाणं वक्खाणाणं च पमाणत्तं होदि । जत्थ पुण जिणवयविणिग्गयं सुत्तमत्थि ण तत्थ एदेसिं पमाणत्तं । सुहुमवणप्फदिकाइए भणिदूण सुहुमणिगोदजीवा सुत्तम्मि परूविदा, तदो एदेसिं पुध परूवणणहाणुववत्तीदो सुहुमवणप्फदिकाइय-सुहुमणिगोदाणं विसेसो अत्थि त्ति णव्वदे ।

‘वणप्फदिकाइया एइंदियाणं भंगो ॥ ८५ ॥

‘जहा एइंदियाण जहण्णकालो खुद्दाभवग्गहणमुक्कस्सो अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्ठं तहा वणप्फदिकाइयाणं (१ ब. प्रतौ काइया इति पाठः ।) जहण्णकालो उक्कस्सकालो च होदि त्ति उत्तं होइ ।

‘णिगोदजीवा केव्वचिरं कालादो होंति ? ॥ ८६ ॥

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ ८७ ॥

‘एदं पि सुगमं ।

‘उक्कस्सेण अड्ढाइज्जपोग्गलपरियट्ठं ॥ ८८ ॥

<जीवोंसे भिन्न सूक्ष्म निगोद जीव नहीं हैं, क्योंकि वैसा पाया नहीं जाता ?>

‘समाधान-><यह शंका ठीक नहीं है, क्योंकि, जहां सूत्र नहीं है वहां आचार्यवचनोंकी और व्याख्यानोंकी प्रमाणता होती है। किन्तु जहां जिन भगवानके मुखसे निर्गत सूत्र है वहां इनकी प्रमाणता नहीं होती । चूंकि सूक्ष्म वनस्पतिकायिकोंका पृथक्से कथन कर सूत्रमें सूक्ष्म निगोदजीवोंका निरूपण किया गया है, अतः इनके पृथक् प्ररूपणकी अन्यथानुपपत्तीसे सूक्ष्म वनस्पतिकायिक और सूक्ष्म निगोदजीवोंमें भेद है, यह जाना जाता है।>

‘वनस्पतिकायिक जीवोंके कालका कथन एकेन्द्रिय जीवोंके समान है ॥ ८५ ॥

< जिस प्रकार एकेन्द्रियोंका जघन्य काल क्षुद्रभवग्रण और उत्कृष्टकाल असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अनन्त काल है उसी प्रकार वनस्पतिकायिक जीवोंका जघन्य काल और उत्कृष्ट काल होता है, यह सूत्रका अर्थ है। >

‘निगोदजीव कितने काल तक रहते हैं ? ॥ ८६ ॥

< यह सूत्र सुगम है । >

‘जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहण काल तक निगोदजीव उस पर्यायमें रहते हैं ॥ ८७ ॥

< यह सूत्र भी सुगम है । >

‘उत्कृष्टसे अढाई पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण काल तक निगोदजीव उस पर्यायमें रहते हैं ? ॥

८८ ॥

एगजीवेण कालाणुगमे तसकाइयकालपरुवणं

‘अणिगोदजीवस्स णिगोदेसु उप्पणस्स उक्कस्सेण अड्ढाइज्जपोग्गलपरियट्ठेहिंतो उवरि परिभमणाभावादो ।

‘बादरणिगोदजीवा बादरपुढविकाइयाणं भंगो ॥ ८९ ॥

‘जहा बादरपुढविकाइयाणं जहण्णकालो खुद्दाभवग्गहणमुक्कस्सो कम्मट्ठिदी तहा एदेसिं जहण्णुक्कस्सकाला होंति । जहा बादरपुढविकाइयपज्जत्ताणं कालो तहा बादरणिगोदपज्जत्ताणं होदि । णवरि बादरपुढविकाइयपज्जत्ताणं उक्कस्साउट्ठिदी संखे-ज्जाणि वस्ससहस्साणि, बादरणिगोदपज्जत्ताणं पुण उक्कस्सकालो अंतोमुहुत्तं । जहा बादरपुढविकाइयपज्जत्ताणं जहण्णकालो खुद्दाभवग्गहणमुक्कस्सकालो अंतोमुहुत्तं तहा बादरणिगोदपज्जत्ताणं जहण्णुक्कस्सालो ति भणिदं होदि ।

‘तसकाइया तसकाइयपज्जत्ता केवचिरं कालादो होंति ? ॥ ९० ॥

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं अंतोमुहुत्तं ॥ ९१ ॥

< क्योंकि जो निगोदपर्यायसे भिन्न जीव निगोदजीवोंमें उत्पन्न होता है उसका उत्कृष्टसे अढाई पुद्गलपरिवर्तनोंसे ऊपर परिभ्रमण नहीं होता है । >

‘बादर निगोदजीवोंका काल बादर पृथिवीकायिकोंकेसमान है ॥ ८९ ॥

< जिस प्रकार बादर पृथिवीकायिकोंका जघन्य काल क्षुद्रभवग्रहण और उत्कृष्टकाल कर्मस्थितिप्रमाण है, उसी प्रकार बादर निगोदजीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल होता है । जिस

प्रकार बादर पृथिवीकायिक पर्याप्तोंका काल है उसी प्रकार बादर निगोद पर्याप्तोंका काल होता है । विशेष केवल इतना है कि बादर पृथिवीकायिकपर्याप्तोंकी उत्कृष्ट आयुस्थिति संख्यात हजार वर्ष है, परन्तु बादर निगोद पर्याप्तोंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त ही है। जिस प्रकार बादर पृथिवीकायिक अपर्याप्तोंका जघन्य काल क्षुद्रभवग्रहण और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है उसी प्रकार बादर निगोद अपर्याप्त-कोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल होता है । >

‘जीव त्रसकायिक और त्रसकायिक पर्याप्त कितने काल तक रहते हैं ? ॥ ९० ॥

< यह सूत्र सुगम है । >

‘जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहण और अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव क्रमसे त्रसकायिक और त्रसकायिक पर्याप्त रहते हैं ॥ ९१ ॥

छक्खंडागमे खुदाबंधो

‘सुगममेदं पि ।

‘उक्कस्सेण बे सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोंडीपुधत्तेणब्भहियाणि बे सागरोवमसहस्साणि ॥ ९२ ॥

‘तसकाइयाणं पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि बे सागरोवमसहस्साणि, तेसिं पज्ज-त्ताणं बे सागरोवमसहस्सं चेव । कुदो ? जहासंखणायादो ।

‘तसकाइयअपज्जत्ता केवचिरं कालादो होंति ? ॥ ९३ ॥

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण खुदाभवग्गहणं ॥ ९४ ॥

‘सुगमं ।

‘उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ ९५ ॥

‘एदं पि सुगमं ।

<यह सूत्र भी सुगम है ।>

‘उत्कृष्टसे पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक दो हजार सागरोपम और केवल दो हजार सागरोपम काल तक जीव क्रमशः त्रसकायिक और त्रसकायिक पर्याप्त रहते हैं ॥ ९२ ॥

< त्रसकायिकोंका उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक दो हजार सागरोपम और त्रसकायिक पर्याप्तोंका केवल दो हजार सागरोपम ही है, क्योंकि, यहां यथा-संख्यन्याय लगता है।

>

‘जीव त्रसकायिक अपर्याप्त कितने काल तक रहते हैं ? ॥ ९३ ॥

<यह सूत्र सुगम है।>

‘जघन्यसे क्षुद्रभवग्रहण काल तक जीव त्रसकायिक अपर्याप्त रहते हैं ॥ ९४ ॥

<यह सूत्र सुगम है।>

‘उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव त्रसकायिक अपर्याप्त रहते हैं ॥ ९५ ॥

<यह सूत्र भी सुगम है।>

एगजीवेण कालाणुगमे मण-वचिजोगिकालपरुवणं

‘जोगाणुवादेण पंचमणजोगी पंचवचिजोगी केचिचिरं कालादो होंति ? ॥ ९६ ॥

‘जोगिणो’ इदि (१ मु. प्रतौ इदि वयणादो इति पाठो नास्ति।) बहुवयणणिद्वेसो किण्ण कदो ? ण, पंचण्हं पि एयत्ताविणाभावेण एयवयणुववत्तीदो । सेसं सुगमं ।

‘जहण्णेण एयसमओ ॥ ९७ ॥

‘मणजोगस्स ताव एगसमयपरुवणा कीरदे । तं जहा-एगो कायजोगेण अच्छिदो कायजोगध्दाए खएण मणजोगे आगदो, तेणेगसमयमच्छिय बिदियसमये मरिय काय-जोगी जादो । लध्दो मणजोगस्स एगसमओ । अधवा कायजोगध्दाखएण मणजोगे आगदे बिदियसमए वाघादिदस्स पुणरवि कायजोगो चेव आगदो । लध्दो बिदियपयारेण एगसमओ । एवं सेसाणं चदुण्हं मणजोगाणं पंचण्हं वचिजोगाणं च एगसमयपरुवणा दोहि पयारेहि णादूण कायव्वा।

‘योगमार्गणानुसार जीव पांच मनोयोगी और पांच वचनयोगी कितने काल तक रहते हैं ?

॥ ९६ ॥

‘शंका-><’जोगिणो’ इस प्रकार यहां बहुवचनका निर्देश क्यों नहीं किया ? >

‘समाधान-><नहीं, क्योंकि, पांचोके ही एकत्वके साथ अविनाभाव होनेसे यहां एकवचन उचित है। शेष सुगम है।>

‘जघन्यसे एक समय तक जीव पांच मनोयोगी और पांच वचनयोगी रहते हैं ॥ ९७ ॥

<प्रथमतः मनोयोगके एक समयकी प्ररूपणा की जाती है। वह इस प्रकार है---एक जीव काययोगसे स्थित था, वह काययोगकालके क्षयसे मनोयोगमें आया, उसके साथ एक समय रहकर व द्वितीय समयमें मरकर काययोगी हो गया। इस प्रकार मनोयोगका जघन्य काल एक समय प्राप्त हो जाता है। अथवा काययोगकालके क्षयसे मनोयोगके प्राप्त होनेपर द्वितीय समयमें व्याघातको प्राप्त हुए उसके फिर भी काययोग ही प्राप्त हो गया। इस तरह द्वितीय प्रकारसे एक समय प्राप्त होता है। इसी प्रकार शेष चार मनोयोगों और पांच वचनयोगोंके भी एक समयकी प्ररूपणा दोनों प्रकारोंसे जानकर करना चाहिये। >

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ ९८ ॥

‘अणप्पिदजोगादो अण्णिदजोगं गंतूण उक्कस्सेण तत्थ अंतोमुहुत्तावट्ठाणं पडि विरोहाभावादो ॥

‘कायजोगी केव्वचिरं कालादो होंति ? ॥ ९९ ॥

‘किमट्ठमेत्थ एगवयणणिद्वेसो कदो ? ण एस दोसो, एगजीवं मोत्तूण बहूहि जीवेहि एत्थ पओजणाभावादो ॥

‘जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १०० ॥

‘अणप्पिदजोगादो कायजोगं गदस्स जहण्णकालस्स वि अंतोमुहुत्तपमाणं मोत्तूण एगसमयादिपमाणणुवलंभादो ॥

‘उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्ठं ॥ १०१ ॥

‘अणप्पिदजोगादो कायजोगं गंतूण तत्थ सुट्ठु दीहध्दमच्छिय कालं करियं एइंदि-येसु उप्पण्णंस्स आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्ठाणि परियट्ठिदस्स काय-जोगुक्कस्सकालुवलंभादो ॥

‘उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव पांच मनोयोगी और पांच वचन-योगी रहते हैं ॥

<क्योंकि, अविवक्षित योगसे विवक्षित योगको प्राप्त होकर उत्कृष्टसे वहां अन्तर्मुहूर्त तक अवस्थान होनेमें कोई विरोध नहीं है ।>

‘जीव काययोगी कितने काल तक रहते हैं ? ॥ ९९ ॥

‘शंका-><यहां एकवचनका निर्देश किस लिये किया ?>

‘समाधान-><यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, एक जीवको छोड़कर बहुत जीवोंसे यहां प्रयोजन नहीं है ।>

‘जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव काययोगी रहता है ॥ १०० ॥

<क्योंकि, अविवक्षित योगसे काययोगको प्राप्त हुए जीवके जघन्य कालका प्रमाण अन्तर्मुहूर्तको छोड़कर एक समयादिरूप नहीं पाया जाता ।>

‘उत्कृष्टसे असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अनन्त काल तक जीव काययोगी रहता है ॥ १०१ ॥

<क्योंकि, अविवक्षित योगसे काययोगको प्राप्त होकर और वहां अतिशय दीर्घ काल तक रहकर कालको करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुए जीवके आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण पुद्गलपरिवर्तन भ्रमण करते हुए जीवके काययोगका उत्कृष्ट काल पाया जाता है ।>

<१ अ. स. प्रत्योः होंति इति पाठः ।>

एगजीवेण कालाणुगमे कायजोगिकालपरुवण

‘ओरालियकायजोगी केचिरं कालादो होदि ? ॥ १०२ ॥

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण एगसमओ ॥ १०३ ॥

‘मणजोगेण वचिजोगेण वा आच्छिय तेसिमध्वाखएण ओरालियकायजोगंगदबि-दियसमए कालं कादूण जोगंतरं गदस्स एगसमयदंसणादो ।

‘उक्कस्सेण बावीसं वाससहस्साणि देसूणाणि ॥ १०४ ॥

‘बावीसवाससहस्साउअपुढवीकाइएसु उप्पज्जिय सब्वजहण्णेण कालेण ओरालियमिस्सध्दं गमिय पज्जत्तिंगदपढमसमयप्पहुडि जाव अंतोमुहुत्तूणबावीसवाससहस्साणि ताव ओरालियकायजोगुवलंभादो ।

‘ओरालियमिस्सकायजोगी वेउव्वियकायजोगी आहारकायजोगी केवचिरं कालादो होदि ?

॥ १०५ ॥

‘सुगमं (१ मु. प्रतौ सुगमं इति पाठी नास्ति ।)।

‘जहण्णेण एगसमओ ॥ १०६ ॥

‘जीव औदारिककाययोगी कितने काल तक रहता है ? ॥ १०२ ॥

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘जघन्यसे एक समय तक जीव औदारिककाययोगी रहता है ॥ १०३ ॥

<क्योंकि, मनोयोग अथवा वचनयोगके साथ रहकर उनके कालक्षयसे औदारिककाययोगको प्राप्त होनेके द्वितीय समयमें मरकर योगान्तरको प्राप्त हुए जीवके एक समयकाल देखा जाता है ।>

‘उत्कृष्टसे बाईस हजार वर्षों तक जीव औदारिककाययोगी रहता है ॥ १०४ ॥

<क्योंकि, बाईस हजार वर्षकी आयुवाले पृथिवीकायिकोंमें उत्पन्न होकर सर्व-जघन्य कालसे औदारिकमिश्रकालको विताकर पर्याप्तिको प्राप्त होनेके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त कम बाईस हजार वर्ष तक औदारिककाययोग पाया जाता है ।>

‘जीव औदारिकमिश्रकाययोगी, वैक्रियिककाययोगी और आहारककाययोगी कितने काल तक रहता है ॥ १०५ ॥

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘जघन्यसे एक समय तक जीव औदारिकमिश्रकाययोगी आदि रहता है ॥ १०६ ॥

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘ओरालियकायजोगाविणाभाविदंडादो कवाडंगदसजोगिजिणम्हि ओरालिय-मिस्सस्स एगसमओ लब्भदे, तत्थ ओरालियमिस्सेण विणा अण्णजोगाभावादो । मण-वचिजोगेहिंतो वेउव्वियजोगंगदबिदियसमए मदस्स एगसमओ वेउव्वियकायजोगस्स उवलब्भदे, मुदपढमसमए कम्मइय (१ ब. प्रतौ कम्मइ इति पाठः ।)-ओरालिय-वेउव्वियमिस्सकायजोगे मोत्तूण वेउव्विकायजोगाणुवलंभादो । मण-वचिजोगेहिंतो आहारकायजोगंगदबिदियसमए मुदस्स मूलसरीरं

पविट्टस्स वा आहारकायजोगस्स एगसमओ लब्भदे, मुदाणं मूलसरीरपवि-ट्टाणं च पढमसमए
आहारकायजोगाणुवलंभादो ।

‘उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।। १०७ ।।

‘मणजोगादो वचिजोगादो वा वेउव्विय-आहारकायजोगं गंतूण सव्वुक्कस्सं अंतो-
मुहुत्तमच्छिय अण्णजोगं गदस्स अंतोमुहुत्तमेत्तकालुवलंभादो, अण्णपिदजोगादो ओरा-
लियमिस्सजोगं गंतूण सव्वुक्कस्सकालमच्छिय अण्णजोगं गदस्स ओरालियमिस्सस्स
अंतोमुहुत्तमेत्तुक्कस्सकालुवलंभादो । सुहुमेइंदियअपज्जत्तएसु बादरेइंदियअपज्जत्तएसु च

<औदारिककाययोगके अविनाभावी दण्डसमुद्घातसे कपाटसमुद्घातको प्राप्त हुए सयोगी
जिनमें औदारिकमिश्रका एक समय काल पाया जाता है, क्योंकि, उस अवस्थामें औदारिकमिश्रके
विना अन्य योग नहीं पाया जाता । मनोयोग या वचनयोगसे वैक्रियिककाययोगको प्राप्त होनेके
द्वितीय समयमें मृत्युको प्राप्त हुए जीवके वैक्रियिककाययोगका एक समय काल पाया जाता है,
क्योंकि, मरजानेके प्रथम समयमें कार्मणकाययोग, औदारिकमिश्रकाययोग और वैक्रियिकमिश्र-
काययोगको छोड़कर वैक्रियिककाययोग पाया नहीं जाता । मनोयोग अथवा वचनयोगसे आहार-
ककाययोगको प्राप्त होनेके द्वितीय समयमें मृत्युको प्राप्त हुए या मूल शरीरमें प्रविष्ट हुए जीवके
आहारककाययोगका एक समय पाया जाता है, क्योंकि, मृत्युको प्राप्त और मूल शरीरमें प्रविष्ट
हुए जीवोंके प्रथम समयमें आहारककाययोग नहीं पाया जाता ।>

‘उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव औदारिकमिश्रकाययोगी आदि रहता है ।। १०७ ।।

<क्योंकि, मनोयोग अथवा वचनयोगसे वैक्रियिक या आहारककालयोगको प्राप्त होकर
सर्वोत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त कालतक रहकर अन्य योगको प्राप्त हुए जीवके अन्तर्मुहूर्त मात्र काल पाया
जाता है, तथा अविवक्षित योगसे औदारिकमिश्रयोगको प्राप्त होकर तथा सर्वोत्कृष्ट काल तक
रहकर अन्य योगको प्राप्त हुए जीवके औदारिकमिश्रका अन्तर्मुहूर्तमात्र उत्कृष्ट काल पाया जाता
है ।>

‘शंका-><सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्तोंमें और बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तोंमें सात >

एगजीवेण कालाणुगमे कायजोगिकालपरुवणं

सत्तडुभवग्गहणाणि (१ ब. प्रतौ भवण्णहाणाणि इति पाठः।) णिरंतरमुप्पण्णस्स बहुओ कालो किण्ण लब्भदे ? ण, ताओ सव्वाओ द्विदीओ एक्कदो कदे वि अंतोमुहुत्तलाभादो ।

वेउव्वियमिस्सकायजोगी आहारमिस्सकायजोगी केव्वचिरं कालादो होदि ? ॥ १०८ ॥

सुगमं ।

जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १०९ ॥

एगसमओ किण्ण लब्भदे ? ण, एत्थ मरण-जोगपरावत्तीणमसंभवादो ।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ ११० ॥

सुगमं ।

कम्मकायजोगी केव्वचिरं कालादो होदि ? ॥ १११ ॥

<आठ भवग्रहण तक निरन्तर उत्पन्न हुए जीवकेबहुत काल क्यों नहीं पाया जाता ? >

समाधान--><नहीं, क्योंकि,उन सब स्थितियोंको इकट्ठा करनेपर भी उनका योग अन्तर्मुहूर्तमात्र काल होता है ।>

जीव वैक्रियिकमिश्रकाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी कितने काल तक रहता है ?

॥ १०८ ॥

<यह सूत्र सुगम है ।>

जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव वैक्रियिकमिश्रकाययोगी और आहारक-मिश्रकाययोगी रहता है ॥१०९ ॥

शंका--><यहां एक समय जघन्य काल क्यों नहीं प्राप्त होता । >

समाधान--><नहीं, क्योंकि, यहां मरण और योगपरावृत्तिका होना असंभव है । >

उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव वैक्रियिकमिश्रकाययोगी और आहारक-मिश्रकाययोगी रहता है ॥११० ॥

< यह सूत्र सुगम है । >

जीव कर्मणकाययोगी कितने काल तक रहता है ? ॥ १११ ॥

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण एगसमओ ॥ ११२ ॥

‘एगविग्गहं कादूण उप्पण्णस्स तदुवलंभादो ।

‘उक्कस्सेण तिण्णिण समया ॥ ११३ ॥

‘तिण्हं समयाणमुवरि विग्गहाणुवलंभादो ।

‘वेदाणुवादेण इत्थिवेदा केच्चिरं कालादो होंति ? ॥ ११४ ॥

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण एगसमओ ॥ ११५ ॥

‘उवसमसेडीदो ओदरिय सवेदो होदूण विदियसमए मुदस्स पुरिसवेदेण परिण-यस्स एगसमओवलंभादो ।

‘उक्कस्सेण पलिदोवमसदपुधत्तं ॥ ११६ ॥

‘अणप्पिदवेदादो इत्थिवेदं गंतूण पलिदोवमसदपुधत्तं तत्थेव परिभमिय पच्छ।

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘जघन्यसे एक समय तक जीव कर्मणकाययोगी रहता है ॥ ११२ ॥

<क्योंकि, एक विग्रह (मोडा) करके उत्पन्न हुए जीवके एक साथ काल पाया जाता है ।

>

‘उत्कृष्टसे तीन समय तक जीव कर्मणकाययोगी रहता है ॥ ११३ ॥

<क्योंकि, तीन समयोंसे अधिक विग्रह (मोडे) पाये नहीं जाते । >

‘वेदमार्गणानुसार जीव स्त्रीवेदी कितने काल तक रहते हैं ? ॥ ११४ ॥

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘जघन्यसे एक समय तक जीव स्त्रीवेदी रहते हैं ॥ ११५ ॥

< क्योंकि, उपशमश्रेणीसे उतरकर सवेद अर्थात् स्त्रीवेदी होकर द्वितीय समयमें मुत्थुको प्राप्त होकर पुरुषवेदसे परिणत हुए जीवके एक समय पाया जाता है । >

‘उत्कृष्टसे सौ पल्योपमपृथक्त्व काल तक जीव स्त्रीवेदी रहते हैं ॥ ११६ ॥

<जीव अविवक्षित वेदसे स्त्रीवेको प्राप्त होकर और पत्योपमशतपृथक्त्व काल>

एगजीवेण कालाणुगमे इत्थिवेदादिकालपरुवणं

‘अण्णवेदं गदो । सदपुधत्तमिदि किं ? तिसदप्पहुडि जाव णवसदाणि ति एदे सव्व-वियप्पा सदपुधत्तमिदि वुच्चंति।

‘पुरसवेदा केव्वचिरं कालादो होंति ? ॥ ११७ ॥

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ११८ ॥

‘पुरिसवेदोदण उवसमसेडिं चढिय अवगदवेदो होदूण पुणो उवसमसेडीदो ओदरमाणो सवेदो होदूण वेदस्स आदिं करिय सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तमध्दमच्छिय पुणो उवसमसेडिं चढिय अवगदवेदाभावं गदम्मि परिसवेदस्स अंतोमुहुत्तमेत्तकालस्सुवलंभादो ।

‘उक्कस्सेण सागरोवमसदपुधत्तं ॥ ११९ ॥

‘णवुंसयवेदम्मि अणंतकालभसंखेज्जलोगमेत्तं वा अच्छिय पुरिसवेदं गंतूण तम-छंडिय सागरोवमसदपुधत्तं तत्थेव परिभमिय अण्णवेदं गदस्स तदुवलंभादो । १००

<तक स्त्रीवेदियोंमें ही परिभ्रमण करकेपश्चात् अन्य वेदको प्राप्त हुआ।>

‘शंका-><शतपृथक्त्व किसे कहते है ? >

‘समाधान-><तीन सौसे लेकर नौ सौ तक ये सब विकल्प ‘शतपृथक्त्व’ कहे जाते हैं। >

‘जीव पुरुषवेदी कितने काल तक रहते हैं ? ॥ ११७ ॥

<यह सूत्र सुगम है।>

‘जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव पुरुषवेदी रहते हैं ॥ ११८ ॥

<पुरुषवेदके उदयसे उपशमश्रेणीपर चढकर, अपगतवेदी होकर, पुनः उपशमश्रेणीसे उतरता हुआ सवेद होकर वेदका आदि करके, सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक रहकर, फिर उपशमश्रेणीपर चढकर अपगवेदपनेको प्राप्त हुए जीवके पुरुषवेदका जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल पाया जाता है।>

‘उत्कृष्टसे सौ सागरोपमपृथक्त्व काल तक जीवपुरुषवेदी रहते हैं ॥ ११९ ॥

<नपुंसकवेदमें अनन्त काल अथवा असंख्यात लोकप्रमाण काल तक रहकर पुरुषवेदको प्राप्त होकर और उसे न छोडकर सौ सागरोपमपृथक्त्व काल तक उसमें ही परिभ्रमण करकेअन्य वेदको प्राप्त हुए जीवकेवह सूत्रोक्त काल पाया जाता >

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘एवमेत्थ सदपुधत्तमिदि गहिदं ।

‘णवुंसयवेदा केवचिर कालादो होंति ? ॥ १२० ॥

‘सुगमं ।

‘जहण्णेय एयसमओ ॥ १२१ ॥

‘णवुंसयवेदोदएण उवसमसेडिं चडिय ओदरिय सवेदो होदूण बिदियसमए कालं करिय पुरिसवेदं गदस्स एगसमयदंसणादो । पुरिसवेदस्स एगसमओ किण्ण लध्दो ? ण, अवगदवेदो होदूण सवेदजादबिदियसमए कालं करिय देवसुप्पण्णे (१ मु. प्रतौ देवेसुप्पण्णो इति पाठः ।) वि पुरिसवेदं मोत्तूण अण्णवेदस्सुदयाभावेण एगसमयाणुवलंभादो ।

‘उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्टं ॥ १२२ ॥

‘अणप्पिदवेदादो (२ मु. प्रतौ अणप्पिदवेदा इति पाठः ।) णवुंसवेदं (३ मु. प्रतौ णवुंसयवेदणं इति पाठः ।) गंतूण आवलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्टे परियट्टिदूण अण्णवेदं गदस्स तदुवलध्दीदो ।

<है । यहां ९०० सागरोपम शतपृथक्त्वसे ग्रहण किये गये है । >

‘जीव नपुंसकवेदी कितने काल तक रहते हैं ? ॥ १२० ॥

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘जघन्यसे एक समय तक जीव नपुंसकवेदी रहते हैं ॥ १२१ ॥

<क्योंकि, नपुंसकवेदके उदयसे उपशमश्रेणीपर चढकर, फिर उतरकर, सवेद होकर और द्वितीय समयमें मरकर पुरुषवेदको प्राप्त हुए जीवके नपुंसकवेदका जघन्यसे एक समय काल देखा जाता है । >

‘शंका-><पुरुषवेदका जघन्य काल एक समय क्यों नहीं पाया जाता ? >

‘समाधान-><नहीं, क्योंकि, अपगतवेद होकर और सवेद होनेके द्वितीय समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेपर भी पुरुषवेदको छोडकर अन्य वेदके उदयका अभाव होनेसे एक समय काल नही पाया जाता ।>

‘उत्कृष्टसे अनंत काल तक जीव नपुंसकवेदी रहते हैं जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।। १२२ ।।

<क्योंकि, अविवक्षित वेदसे नपुंसकवेदको प्राप्त होकर और आवलीके असंख्यातवे भागप्रमाण पुद्गलपरिवर्तकालतक परिभ्रमण करके अन्य वेदको प्राप्त हुए जीवके सूत्रोक्त काल पाया जाता है ।>

एगजीवेण कालाणुगमे अवगतवेदकालपरुवणं

‘अवगतवेदा केचिरं कालादो होंति ? ।। १२३ ।।

‘सुगमं ।

‘उवसमं पडुच्च जहण्णेण एगसमओ ।। १२४ ।।

‘उवसमसेडिं चडिय अवगदवेदो होदूण एगसमयमच्छिय बिदियसमए कालं कादूण वेदभावं गदस्स तदुवलंभादो ।

‘उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।। १२५ ।।

‘इत्थिवेदोदएण णवुंसयवेदोदएण या उवसमसेडिं चडिय अवगदवेदो होदूण सव्वुक्कस्समंतोमुहुत्तमच्छिय वेदभावं गदस्स तदुवलंभादो ।

‘खवगं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।। १२६ ।।

‘खवगसेडिं चडिय अवगदवेदो होदूण सव्वजहण्णेण कालेण परिणिव्वुदस्स तदुवलंभादो ।

‘जीव अपगतवेदी कितने काल तक रहते हैं ? ।। १२३ ।।

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘उपशमकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय तक जीव अपगतवेदी रहते हैं ।। १२४ ।।

<क्योंकि, उपशमश्रेणी पर चढकर अपगतवेदी होकर और एक समय तक रहकर द्वितीय समयमें मरकर सवेदपनको प्राप्त हुए जीवके एक समय काल पाया जाता है ।>

‘उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव अपगतवेदी रहते हैं ॥ १२५ ॥

<क्योंकि, स्त्रीवेदके उदयसे या नपुंसकवेदके उदयसे उपशमश्रेणी पर चढकर, अपगतवेदी होकर और सर्वोत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त काल तक वहां रहकर वेदपनेको प्राप्त हुए जीवके उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त काल पाया जाता है ।>

‘क्षपककी अपेक्षा जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त काल तक अपगतवेदी रहते हैं ॥ १२६ ॥

<क्योंकि, क्षपकश्रेणीपर चढकर और अपगतवेदी होकर सर्वजघन्य कालसे मुक्तिको प्राप्त हुए जीवसे सूत्रोक्त काल पाया जाता है ।>

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूणं ॥ १२७ ॥

‘देवस्स णेरइयस्स वा खइयसम्माइड्डिस्स पुव्वकोडाउएसु मणुसेसुववज्जिय अट्टवस्साणि गमिय संजमं पडिवज्जिय सव्वजहण्णकालेण खवगसेडिं चडिय अवगदवेदो होदूण केवलणाणं समुप्पाइय देसूणपुव्वकोडिं विहरिय अबंधगभावं गदस्स तदुवलंभादो ॥

‘कसायाणुवादेण कोधकसाई माणकसाई मायकसाई लोभकसाई केवचिरं कालादो होंति ? ॥१२८ ॥

‘सुगमं ॥

‘जहण्णेण एयसमओ ॥ १२९ ॥

‘अणप्पिदकसायादो कोधकसायं गंतूण एगसमयमच्छिय कालं करिय णिरयगइं मोत्तूणण्णगईसुप्पण्णस्स एगसमओवलंभादो । कोधस्स वाघादेण एगसमओ णत्थि, वाघादिदे वि कोधस्सेव समुप्पत्तीदो । एवं सेसत्तिण्हं कसायाणं पि एगसमयपरूवणा कायव्वा । णवरि एदेसिं तिण्हं कसायाणं वाघादेण वि एगसमयपरूवणा कायव्वा ॥

‘उत्कृष्टसे कुछ कम एक पूर्वकोटि वर्ष तक जीव अपगतवेदी रहते हैं ॥ १२७ ॥

<क्योंकि, देव अथवा नारकी क्षायिकसम्यग्दृष्टिके पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर आठ वर्ष बिताकर, संयमको प्राप्त कर, सर्वजघन्य कालसे क्षपकश्रेणीपर चढकर

अपगतवेदी होकर, केवलज्ञानको उत्पन्न कर, और कुछ कम पूर्वकोटि वर्ष तक विहार करके अबंधक अवस्थाको प्राप्त हुए जीवके सूत्रोक्त काल पाया जाता है ।>

‘कषायमार्गानुसार जीव क्रोधकषायी, मानकषायी, मायाकषायी और लोभ-कषायी कब तक रहता है? ॥१२८॥

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘जघन्यसे एक समय तक जीव क्रोधकषायी आदि रहता है ॥ १२९ ॥

<क्योंकि, अविवक्षित कषायसे क्रोधकषायको प्राप्त होकर, एक समय रहकर और फिर मस्कर नरकगतिको छोड़ अन्य गतियोंमें उत्पन्न हुए जीवके एक समय पाया जाता है। क्रोधके व्याघातसे एक समय नहीं पाया जाता, क्योंकि व्याघातको प्राप्त होनेपर भी पुनः क्रोधकी ही उत्पत्ति होती है । इसी प्रकार शेष तीन कषायोंके भी एक समयकी प्ररूपणा करनी चाहिये । विशेष इतना है कि इन तीन कषायोंके व्याघातसे भी एक समयकी प्ररूपणा करनी चाहिये । मरणकी अपेक्षा एक समय >

एगजीवेण कालाणुगमे कसाइ-जकसाइकालपरुवणं

‘मरणेण एगसमए भण्णमाणे माणस्स मणुसगइं, मायाए तिरिक्खगइं, लोभस्स देवगइं मोत्तूण सेसासु तिसु (१ अ.स. प्रत्यौ तीसु इति पाठः ।) गईसु उप्पाएअब्बो । कुदो ? णिरय-मणुस-तिरिक्ख-देवगईसु उप्पण्णाणं पढमसमए जहाकमेण कोध-माण-माया-लोभाणं चेवुदयदंसणादो ।

‘उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ १३० ॥

‘अणप्पिदकसायादो अप्पिकसाणं गंतूणुक्कस्सकालं तत्थ द्विदस्स वि अंतोमुहु-त्तादो अधिकालाणुवलंभादो ।

‘अकसाई अवगदवेदभंगो ॥ १३१ ॥

‘जहा अवगदवेदाणं उवसमसेंखिं खवगसेंखिं च पडुच्च जहण्णेण एगसमय-अंतोमुहुत्तपरुवणा, उक्कस्सेण अंतोमुहुत्त-देसूणपुव्वकोडिपरुवणाच कदा तथा अकसायाणं पि जहणुण्क्कस्सेहि कालपरुवणा कादव्वा त्ति भणिदं होदि ।

‘णाणाणुवादेण मदिअण्णाणी सुदअण्णाणी केवचिरं कालादो होदि ? ॥ १३२ ॥

<कहनेपर मानकी मनुष्यगति, मायाकी तिर्यचगति और लोभकी देवगतिको छोडकर शेष तीन गतियोंमें जीवको उत्पन्न कराना चाहिये । कारण कि नरक, मनुष्य, तिर्यच और देवगतियोंमें उत्पन्न हुए जीवोंके प्रथम समयमें यथाक्रमसे क्रोध, मान, माया और लोभका उदय देखा जाता है ।>

‘उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव क्रोधकषायी आदि रहता है ॥ १३० ॥

<क्योंकि, अविवक्षित कषायसे विवक्षित कषायको प्राप्त होकर उत्कृष्ट काल तक वहीं स्थित हुए भी जीवके अन्तर्मुहूर्तसे अधिक काल नहीं पाया जाता ।>

‘अकषायी जीवोंका काल अपगतवेदियोंके समान है ॥ १३१ ॥

<जिस प्रकार अपगतवेदियोंके उपशमश्रेणी और क्षपकश्रेणीकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय व अन्तर्मुहूर्त कालकी प्ररूपणा तथा उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्त व कुछ कम पूर्व-कोटि वर्ष प्रमाण कालकी प्ररूपणा की है, उसी प्रकार अकषायी जीवोंकी भी जघन्य और उत्कृष्टसे कालप्ररूपणा करनी चाहिये । यह उक्त सूत्रका अर्थ है ।>

‘ज्ञानमार्गणानुसार जीव मृत्युज्ञानी और श्रुताज्ञानी कितने काल तक रहता है ॥ १३२ ॥

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘सुगमं ।

‘अणादिओ अपज्जवसिदो ॥ १३३ ॥

‘अभवियं पडुच्च एसो णिद्देसो, अभव्वसमाणभव्वं वा ।

‘अणादिओ सपज्जवसिदो ॥ १३४ ॥

‘एसो भवियजीवं पडुच्च णिद्देसो कदो ।

‘सादिओ सपज्जवसिदो ॥ १३५ ॥

‘एसो णिद्देसो णाणादो अण्णाणंगदभवियजीवं पडुच्च कदो ।

‘जो सो सादिओ सपज्जवसिदो तरस्स इमो णिद्देसो-जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १३६ ॥

‘सम्माइद्धिस्स मिच्छत्तं गंतूण मदि-सुदअण्णाणाणि पडिवज्जिय सब्वजहण्ण-
मंतोमुहुत्तमच्छिय सम्मत्तं गंतूण पडिवण्णमदि-सुदणाणस्स जहण्णकालुवलंभादो ।

‘उक्कस्सेण अध्दपोग्गलपरियट्ठं देसूणं ॥ १३७ ॥

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी जीवोंका काल अनादि-अनन्त है ॥ १३३ ॥

<यह निर्देश अभव्य अथवा अभव्य समान भव्य जीवकी अपेक्षासे किया गया है ।>

‘उक्त दोनों अज्ञानियोंका काल अनादि-सान्त है ॥ १३४ ॥

<यह निर्देश भव्य जीवकी अपेक्षासे किया गया है ।>

‘उक्त दोनों अज्ञानियोंका काल सादि-सान्त है ॥ १३५ ॥

<यह निर्देश ज्ञानसे अज्ञानको प्राप्त हुए भव्य जीवकी अपेक्षासे किया गया है ।>

‘जो वह सादि-सान्त काल है उसका निर्देश इस प्रकार है---जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त काल है ॥ १३६ ॥

<क्योंकि, सम्यग्दृष्टि जीवके मिथ्यात्वको प्राप्त होकर मत्यज्ञान और श्रुताज्ञानको प्राप्त कर एवं सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक रहकर सम्यक्त्वको प्राप्त होकर मतिज्ञान और श्रुतज्ञानको प्राप्त करनेवालेके जघन्यकाल पाया जाता है ।>

‘उक्त जीव उकृष्टसे कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल तक मत्यज्ञानी और श्रुताज्ञानी रहता है ॥ १३७ ॥

एगजीवेण कालाणुगमे अण्णणित्तियकालपरुवणं

‘अणादियमिच्छाङ्घ्रिस्स तिण्णि वि करणाणि अध्दपोग्गलपरियट्ठस्स बाहिं कारुण पोग्गलपरियट्ठादिसमए उवसमसम्मत्तं घेतूण आभिणिबोहिय-सुदणाणाणि पडिवज्जिय सब्व जहण्णमंतोमुहुत्तमच्छिय छआवलियाओ अत्थि ति सासणं गंतूण मदि-सुदअण्णाण मादिं करिय मिच्छत्तं गंतूण पोग्गलपरियट्ठस्स अध्दं देसूणं परिभमिय पुणो अपच्छिमे भवे मदि-सुदणाणाणि उप्पाइय अंतोमुहुत्तेण अबंधगतं गदस्स देसूणपोग्गलपरियट्ठस्स अध्दुवलंभादो

‘विभंगणाणी केव्वचिरं कालादो होदि ? ॥ १३८ ॥

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण एगसमओ ॥ १३९ ॥

‘देवस्स णेरइयस्स वा उवसमसम्माइड्डिस्स उवसमसम्मत्तध्दाए एगसमयावेससाए सासणं
गंतूण विभंगणाणेण सह एगसमयमच्छिय बिदियसमए मदस्स तदुवलंभादो ।

‘उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोवमाणि देसूणाणि ।। १४० ।।

<क्योंकि, अनादिमिथ्यादृष्टि जीवके अर्धपुद्गलपरिवर्तन कालके बाहिर तीनों ही करणोंको
करके पुद्गलपरिवर्तनके प्रथम समयमें उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण कर आभिनिबोधिक व श्रुतज्ञानको प्राप्त करके और सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक रहकर उपशमसम्यक्त्वमें छह आवलियां शेष रहनेपर सासादनसम्यक्त्वको प्राप्त होकर मति और श्रुत अज्ञानका आदि करके मिथ्यात्वको प्राप्त हो कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल तक भ्रमण करके पुनः अन्तिम भवमें मति एवं श्रुत ज्ञानको उत्पन्न कर अन्तर्मुहूर्त कालसे अबंधक अवस्थाको प्राप्त होनेपर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल पाया जाता है । >

‘जीव विभंगज्ञानी कितने काल तक रहता है ? ।। १३८ ।।

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘जघन्यसे एक समय तक जीव विभंगज्ञानी रहता है ।। १३९ ।।

<क्योंकि, देव, अथवा नारकी उपशमसम्यक्त्वके उपशमसम्यक्त्वके कालमें एक समय शेष रहनेपर सासादनसम्यक्त्वको प्राप्त होकर और विभंगज्ञानके साथ एक समय रहकर द्वितीय समयमें मृत्युको प्राप्त होनेपर वह सूत्रोक्त काल पाया जाता है ।>

‘उत्कृष्टसे कुछ कम तेत्तीस सागरोपम काल तक जीव विभंगज्ञानी रहता है ।। १४० ।।

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘तिरिक्खस्स मणुसस्स वा तेत्तीसाउड्डिदिएसु सत्तमपुढविणेरइएसु उप्पज्जिय छपज्जतीओ
समाणिय विभंगणाणी होदूण अंतोमुहुत्तेणूणतेत्तीसाउड्डिदिमच्छिय णिग्गदस्स तदुवलंभादो ।

‘आभिणिबोहिय-सुद-ओहिणाणी केवचिरं कालादो होदि ? ।। १४१ ।।

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।। १४२ ।।

‘देवस्स णेरइयस्स वा मदि-सुद-विभंगअण्णाणेहि अच्छिदस्स सम्मत्तं घेत्तूणप्पा-
इदमदिसुदोहिणाणस्स तत्थ जहण्ण (१ मु. प्रतौ णाणस्स जहण्ण इति पाठः ।) मंतोमुहुत्तमच्छिय
मिच्छत्तं गयस्स तदंसणादो ।

‘उक्कस्सेण छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।। १४३ ।।

‘देवस्स णेरइयस्स वा पडिवण्णउवसमसम्मत्तेण सह समुप्पण्णमदि-सुद-ओहि-णाणस्स
वेदगसम्मत्तं पडिवज्जिय अविणड्ढतिणाणेहि (२ अ.स. प्रत्यौः विणाणेहि इति पाठः ।)
अंतोमुहुत्तमच्छिय एदेणंतोमह-त्तेणूणपुव्वकोडाउअमणुस्सेसुववज्जिय पुणो वीसंसागरोवमिएसु
देवेसुववज्जिय पुणो पुव्व-

<क्योंकि, तेतीस सागरोपमप्रमाण आयुवाले सप्तम पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न होकर,
छह पर्याप्तियोंको पूर्ण कर विभंगज्ञानी होकर अन्तर्मुहूर्त कम तेतीस सागरोपमप्रमाण आयुस्थिति
तक रहकर वहांसे निकले हुए तिर्यंच अथवा मनुष्यकेवह सूत्रोक्त काल पाया जाता है ।>

‘जीव आभिनिबोधिक, श्रुत और अवधिज्ञानी कितने काल तक रहता है ? ।। १४१ ।।

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी एवं अवधिज्ञानी रहता है
।।१४२ ।।

<क्योंकि, मति, श्रुत और विभंग अज्ञानके साथ स्थित देव अथवा नारकीके सम्यक्त्वको
ग्रहणकर और मति, श्रुत, एवं अवधि ज्ञानको उत्पन्न करके उनमें जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक
रहकर मिथ्यात्वको प्राप्त होनेपर उक्त काल देखा जाता है ।>

‘उत्कृष्टसे साधिक छयासठ सागरोपम काल तक जीव आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी एवं
अवधिज्ञानी रहता है ।। १४३ ।।

<देव अथवा नारकीके प्राप्त हुए उपशमसम्यक्त्वके साथ मति, श्रुत, और अवधि ज्ञानको
उत्पन्न करके देवकसम्यक्त्वको प्राप्त कर अविनष्ट तीनों ज्ञानोंके साथ अन्तर्मुहूर्त काल तक
रहकर, इस अन्तर्मुहूर्तसे हीन पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर पुनः वीस सागरोपमाण
आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर, पुनः पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्योंमें >

एगजीवेण कालाणुगमे सम्माणाणिकालपरुवणं

‘कोडाउएसु मणुस्सेसुववज्जिय बावीसंसागरोवमड्विदीएसु देवेसुववज्जिदूण पुणो पुव्व-कोडाउएसु मणुस्सेसुववज्जिय खइयं पडुविय चउवीसंसागरोवमाउड्विदिएसु देवेसुववज्जि-दूण पुणो पुव्वकोडाउएसु मणुस्सेसुववज्जिय थोवावसेसे जीविए केवलणाणी होदूण अबंधगतं गदस्स चदुहि पुव्वकोडीहि सादिरेयछावड्विसागरोवमाणुवलंभादो । वेदगसम्मत्तेण छावड्विसागरोवमाणि भमाविय खइयं पडुविय तेतीससागरोवमाउड्विदिएसु देवेसु-प्पाइय अबंधओ किण्ण कओ ? ण, सम्मत्तेण सह जदि संसारे सुट्ठु बहुअं काल परिभमइ तो चदुहि पुव्वकोडीहि सादिरेयछावड्विसागरोवमाणि चेव परिभमिद त्ति वक्खाणंतरदंसणट्टमुवदेसणादो । अंतोमुहुत्ताहियछावड्विसागरोवमाणि किण्ण वुत्ताणि ? ण, केवलवेदगसम्मत्तेण छावड्विसागरोवमाणि संपुण्णाणि परिभमिय खइयभावं गदस्स तदुवलंभादो ।

‘मणपज्जवणाणी केवलणाणी केवचिरं कालादो होंति ? ।। १४४ ।।

‘सुगमं ।

<उत्पन्न होकर, पुनः बाईस सागरोपम आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर पुनः पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर, क्षायिकसम्यक्त्वका प्रारंभ करके चौबीस सागरोपम आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न होकर, पुनःपूर्वकोटि आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर, जीवितके थोडा शेष रहनेपर केवलज्ञानी होकर अबन्धक अवस्थाको प्राप्त होनेपर चार पूर्वकोटियोंसे अधिक छयासठ सागरोपम पाये जाते है । >

‘शंका-><वेदगसम्यक्त्वके साथ छयासठ सागरोपमप्रमाण काल तक घुमाकर और फिर क्षायिकसम्यक्त्वको प्रारंभ कर तेतीस सागरोपमप्रमाण आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न कराकर अबन्ध क्यों नहीं किया ? >

‘समाधान-><नहीं, क्योंकि सम्यक्त्वके साथ यदि जीव संसारमें खूब बहुत काल तक भ्रमण करे तो चार पूर्वकोटियोंसे साधिक छयासठ सागरोपमप्रमाण काल तक ही भ्रमण करता है ऐसा अन्य व्याख्यान दिखलानेकेलिये वैसा उपदेश किया है । >

‘शंका-><अन्तर्मुहूर्तसे अधिक छयासठ सागरोपम क्यों नहीं कहे ?>

‘समाधान--><नहीं, क्योंकि, केवल वेदकसम्यक्त्वके साथ सम्पूर्ण छयासठ सागरोपम काल तक भ्रमणकर क्षायिकभावको प्राप्त हुए जीवके अन्तर्मुहूर्तसे अधिक छयासठ सागरोपम पाये जाते हैं ।>

‘जीव मनःपर्ययज्ञानी और केवलज्ञानी कितने काल तक रहते हैं ? ॥ १४४ ॥

<यह सूत्र सुगम है ।>

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १४५ ॥

‘दोसु संजदेसु परिणामपच्चएणुप्पाइदकेवल-मणपज्जवणाणेसु सब्वजहणं कालं तेहि सह अच्छिय असंजममबंधयभावं व गदेसु (१ मु. प्रतौ-मावं यदेसु इति पाठः ।) एदस्सुवलंभादो ।

‘उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूणा ॥ १४६ ॥

‘कुदो ? गब्भादिअद्दवस्सेहि संजमं पडिवज्जिय आभिणिबोहिय-सुदणाणाणि उप्पाइय अंतोमुहुत्तेण मणपज्जवणाणमुप्पाइय पुव्वकोडिं विहरिय देवेसुप्पणस्स देसूण पुव्वकोडिकालोवलंभादो । एवं केवलणाणिस्स वि उक्कस्सकालो वत्तव्वो । णवरि देवेहिंतो णेरइएहिंतो वा आगंतूण पुव्वकोडाउएसु मणुस्सेसु खइयसम्मत्तेण सह उप्प-ज्जिय गब्भादिअद्दवस्सेहि संजमं पडिवज्जिय अंतोमुहुत्तमच्छिय केवलणाणमुप्पाइय-देसूणपुव्वकोडिं विहरिय अबंधगतं गदस्स वत्तव्वं ।

‘संजमाणुवादेण संजदा परिहारसुद्धिसंजदा संजदासंजदा केव-चिरं कालादो होंति ॥ १४७

॥

‘जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त तक जीव मनःपर्ययज्ञानी और केवलज्ञानी रहते हैं ॥ १४५ ॥

<क्योंकि, दो संयत जीवोंके परिणामोंके निमित्तसे केवलज्ञान व मनःपर्ययज्ञानको उत्पन्न करके और सबसे जघन्य काल तक उनके साथ रहकर असंयम व अबन्धक भावको प्राप्त होनेपर यह काल पाया जाता है ।>

‘उत्कृष्टसे कुछ कम पूर्वकोटि वर्ष तक जीव मनःपर्ययज्ञानी और केवल ज्ञानी रहते हैं ॥

१४६ ॥

<क्योंकि, गर्भसे लेकर आठ वर्षकेबाद संयमको प्राप्त कर आभिनिबोधिकज्ञान और श्रुतज्ञानको उत्पन्न कर अन्तर्मुहूर्तसे मनःपर्ययज्ञानको उत्पन्न कर और पूर्वकोटि वर्ष तक विहार करके देवोंमें उत्पन्न हुए जीवके कुछ कम पूर्वकोटि काल पाया जाता है । इसी प्रकार केवल, इतनीका भी उत्कृष्ट काल कहना चाहिये । विशेष यह है कि देवों या नारकियोंमेंसे आकर, पूर्वकोटि आयुवाले मनुष्योंमें क्षायिकसम्यक्त्वके साथ उत्पन्न होकर, गर्भसे लेकर आठ वर्षोंसे संयमको प्राप्त कर, अन्तर्मुहूर्त रहकर, केवलज्ञान उत्पन्न कर और कुछ कम पूर्वकोटि तक विहार करके अबन्धक अवस्थाको प्राप्त हुए जीवके कुछ कम पूर्वकोटि काल पाया जाता है, ऐसा कहना चाहिये । >

‘जीव संयममार्गणानुसार संयत, परिहारशुद्धिसंयत और संयतासंयत कितने काल तक रहते हैं ?

॥ १४७ ॥

< २ मु. प्रतौ कोडाउएसु खइय इति पाठः । >

< ३ अ.स. प्रत्यौः देवेसुप्पणस्स देसूणपुव्वकोडिं विरहिय अबंध इति पाठः । >

एगजीवेण कालाणुगमे संजदादिकालपरुवणं

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १४८ ॥

‘कुदो ? संजमं परिहारसुद्धिसंजमं संजमासंजमं च गंतूण जहण्णकालमच्छिय अण्णगुणं गदेसु तदुवलंभादो ।

‘उक्कसेण पुव्वकोडि देसूणा ॥ १४९ ॥

‘कुदो ? मणुस्सस्स गब्भादिअट्ठवस्सेहि संजमं पडिवज्जिय देसूणपुव्वकोडिं संजममणुपा-लिय कालं कारुण देवेसुप्पणस्स देसूणपुव्वकोडिमेत्तसंजमकालुवलंभादो । एवं परिहार-सुद्धिसंजदस्स वि उक्कस्सालो वत्तव्वो । णवरि सव्वसुही होदूण तीसं वस्साणि गमिय संजमं पडिवज्जिय तदो (१ मु. प्रतौ वमिय तदो इति पाठः।) वासपुधत्तेण तित्थयरपादमूले पच्चक्खाणणामघेयपुव्वं पढिदूण पुणो पच्छा परिहारसुद्धिसंजमं पडिवज्जिय देसूणपुव्वकोडिकालमच्छिदूण देवेसुप्पणस्स वत्तव्वं । एवमट्ठतीसवस्सेहि (२ अ. प्रतौ वस्सेहि इति पाठः।) ऊणिया पुव्वकोडी परिहारसुद्धिसंजमस्स कालो वुत्तो । के वि आइरिया सोलसवस्सेहि के

वि बावीसवस्सेहि ऊणिया पुव्वकोडि ति भणंति । एवं संजदासंजस्स वि उक्कस्सकालो वत्तव्वो ।
णवरि अंतोमुहुत्तपुधत्तेण ऊणिया।

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त काल तक जीव संयत आदि रहते हैं ॥ १४८ ॥

<क्योंकि संयम, परिहारशुद्धिसंयम और संयमासंयमको प्राप्त होकर व जघन्य काल तक रहकर अन्य गुणस्थानको प्राप्त होनेपर वह सूत्रोक्त काल पाया जाता है ।>

‘उत्कृष्टसे कुछ कम पूर्वकोटि काल तक जीवसंयत आदि रहते हैं ॥ १४९ ॥

<क्योंकि, गर्भसे लेकर आठ वर्षोंसे संयमको प्राप्तकर और कुछ कम पूर्वकोटि वर्ष तक संयमका पालन कर व मरकर देवोंमें उत्पन्न हुए मनुष्यके कुछ कम पूर्वकोटिप्रमाण संयमकाल पाया जाता है । इसी प्रकार परिहारशुद्धिसंयतका भी उत्कृष्ट काल कहना चाहिये । विशेष इतना है कि सर्व सुखी होकर तीस वर्षोंको विताकर, संयमको प्राप्तकर पश्चात् वर्ष पृथक्त्वसे तीर्थंकरके पादमूलमें प्रत्याख्यान नामक पूर्वको पढकर पुनः तत्पश्चात् परिहारशुद्धि संयमको प्राप्त कर और कुछ कम पूर्वकोटि वर्ष तक रहकर देवोंमें उत्पन्न हुए जीवके पूर्वोक्त काल प्रमाण कहना चाहिये । इस प्रकार अडतीस वर्षोंसे कम पूर्वकोटि वर्षप्रमाण परिहारशुद्धिसंयमका काल कहा गया है । कोई आचार्य सोलह वर्षोंसे और कोई बाईस वर्षोंसे कम पूर्व-कोटि वर्षप्रमाण उसका काल कहते हैं । इसी प्रकार संयतासंयतका भी उत्कृष्ट काल कहना चाहिये । विशेष यह है कि अन्तर्मुहूर्तपृथक्त्वसे कम पूर्वकोटि वर्ष >

छक्खंडागमे खुद्दाबंधो

‘पुव्वकोडी संजमासंजमस्स कालो ति वत्तव्वं ।

‘सामाइय-छेदोवट्ठावणसुद्धिसंजदा केवचिरं कालादो होंति ? ॥ १५० ॥

‘सुगमं ।

‘जहण्णेण एगसमओ ॥ १५१ ॥

‘उवसमसेडीदो ओयरमाणस्स सुहुम (१ अ.ब.स. प्रतिषु माणस्स कुसे सुहुम इति पाठः ।)
सांपराइयसुद्धिसंजमादो सामाइय-छेदोवद्वा-वणसुद्धिसंजमं पडिवज्जिय तत्थ एगसमयमच्छिय
विदियसमए मुदस्स एगसमओ-वलंभादो।

‘उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूणा ॥ १५२ ॥

‘पुव्वकोडाउअमणुस्सस्स गब्भादिअद्दवस्सेहि सामाइय-छेदोवद्वाणियसुद्धिसंजमं
पडिवज्जिय अद्दवस्सूणपुव्वकोडिं विहरिय देवेसुप्पण्णस्स तदुवलंभादो ।

‘सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदा केवचिरं कालादो होंति ? ॥ १५३ ॥

<संयमासंयमका काल होता है, ऐसा कहना चाहिये ।>

‘जीव सामायिक-छेदोपस्थापनशुद्धिसंयत कितने काल तक रहते हैं ? ॥ १५० ॥

<यह सूत्र सुगम है ।>

‘जघन्यसे एक समय तक जीव सामायिक-छेदोपस्थापनशुद्धिसंयत रहते हैं ॥ १५१ ॥

<उपशमश्रेणीसे उतरनेवाले जीवके सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयमसे सामायिकछेदो-
पस्थापनशुद्धिसंयमको प्राप्त कर और उसमें एक समय तक रहकर द्वितीय समयमें मरनेपर एक
समय काल पाया जाता है ।>

‘उत्कृष्टसे कुछ कम पूर्वकोटि वर्षप्रमाण काल तक जीव सामायिकछेदोपस्था-पनशुद्धिसंयत रहते
हैं ॥ १५२ ॥

<पूर्वकोटि वर्षप्रमाण आयुवाले मनुष्यके गर्भादि आठ वर्षोंसे सामायिकछेदोप-
स्थानिकशुद्धिसंयमको प्राप्त कर और आठ वर्ष कम पूर्वकोटि वर्ष तक विहार करके देवोंमें
उत्पन्न होनेपर वह सूत्रोक्त काल पाया जाता है ।>

‘जीव सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयत कितने काल तक रहते हैं ? ॥ १५३ ॥